एक लड़की की कहानी

वह लड़की जो पति के घर में पल बढ़ रही है
दो बेटे और एक बेटी को लेकर पल बढ़ रही है
सोलह साल की वह लड़की,पति के घर में l

हर रोज़ सुबह चार बजे
मुर्गी की आवाज़ से नींद खुलती है
जल्द से हाथ मुँह धोकर हो जाती है तैयार,वह सोलह साल की लड़की l
४.४० की ट्रैन है -कैनिंग लोकल;
४.५२ में आती है l
लगभग दो मील दूर है स्टेशन
तब भी आधी रात है पति और बच्चों के लिए l
ट्रैन में चढ़ते ही दरवाज़े पर सर रखकर फर्श पर बैठने की रोज़ की आदत है ,
बेतबेड़िया से रतन दा घुघनी और मुर्रा लेकर चढ़ेंगे,
आँचल की गाँठ से एक रूपया और पचास पैसे निकाल कर रखती है l
बेतबेड़िया पार करते ही मटर मुर्रा और उँगलियों में हरी मिर्च l
चंपाहाटी,कालिकापुर,विद्याधरपुर,सोनारपुर,नरेन्द्रपुर,
जादवपुर अभी भी सात स्टेशन बाकी है l
६.१० वाली जादवपुर की गाडी आज २० मिनट लेट है,
इसके बाद भाग-दौड़ ,विजयगढ़ में एक घर में काम करने जाएगी l
आज झरना भाभी बहुत गुस्सा करेंगी,
पहले घर में खाना पकाने में देर हो जाए
तो सब घरों में देर हो जाएगी
साहब आठ बजे नाश्ता कर ऑफिस जाएंगे
भाभी को सात बजे बिस्तर में चाय चाहिए ही
साढ़े सात बजे गॉल्फ़ग्रीन में देबुदा के मेस में खाना पकाती है l
बर्तन धोते -धोते,पोछा लगाते-लगाते, झाड़ू लगाते-लगाते ग्यारह बज जाता हैं l
पर मेस के लड़के फिर भी अच्छे हैं ,
दोपहर का खाना भी वही खा लेती है,
बारह बजे विक्रमगढ़ जा सके इसलिए,
विक्रमगढ़ के तालाब में कपड़े धोने का मजा ही अलग है,
एक बाल्टी कपड़े धोने पर पांच रूपए मिलते हैं,
 दो घंटे में पांच से सात बाल्टी कपड़े धो देती है ,
पति नशा करता है,उसी के पैसे जुगाड़ने के लिए बेचारी रोज कपडे धोती है,

वरना नसीब में मिलती है मार।
दोपहर के तीन बजे लौटते वक्त,
देबुदा के घर में चावल- दाल- सब्जी खाकर चार लड़कों के बर्तन धो कर,
उसके कोलकाता के काम ख़त्म होते हैं।

फिर भाग -दौड़ पांच बीस वाली कैनिंग लोकल से,
झरना भाभी के घर से महीने में सात सौ,
देबुदा के घर से आठ सौ।
दिन के कपड़े धोकर मिलते हैं पचीस -तीस रूपए,
घर पहुँचकर थोड़ा काम कर आराम करती है,
वह सोलह साल की लड़की।
बेटा बेटी बिना खाए ही सो गए हैं द्वार पर,
लग रहा है रात के ९ बज गए हैं।
अरे फटिक भैया के साइकिल की आवाज़,
वह तो आठ चालीस की ट्रैन में आता है।
मेरा मरद आज फिर से नशे में चूर होकर गाली बक रहा है।
आज फिर से उल्टी न कर बैठे,
कल तो उल्टी साफ़ करते करते ही रात के बारह बज गए थे।
चलो,सो जाते हैं।
कल फिर से नए दिन की शुरुआत करनी है।

इसी बीच में कभी मरद बीमार पड़ता है ,तो बीमार पड़ते है कभी बच्चें ,
या वह सोलह साल की लड़की बीमार पड़ती है,
काम में जाना नहीं होता।
नहीं आते हैं पैसे।
चूल्हा नहीं जलता,
मरद को नशे के पैसे नहीं मिलते हैं ,
लड़की को पड़ती है मार।
झरना भाभी फ़ोन में काम से निकाल देने की धमकी देती है।
वह सोलह साल की लड़की पति के घर में,
अपनी छुट्टी के दिनों में,
लालटेन जला कर अ -आ -इ -ई लिखती है स्लेट पर,
बेटे बेटियों के साथ,
खुद भी पल बढ़ रही है वह सोलह साल की लड़की।

लाल गुलाब

आओ भाइयों!
बन्दूक फेको और हाथ में ले लो,
एक लाल गुलाब l
आज सुबह,
सड़क किनारे जिस लाश को फेंकी थी तुमने,
उसी के खून की छीटें
अखबारों से होते हुए टपक रही है,करोड़ो देशवासियों के ड्राइंग रूम के कोने में l
जरा देखो तो एकबार,
उसके दो नन्हे नवजात
कातरता से ताक रहे हैं,
अपनी अम्मा और दादी को,
जो आँगन में असहाय होकर चीख रहे हैं l
उनके बाप की लाश
अखबारों के प्रथम पृष्ठ पर,और
पीच-सड़कों की धूल मिट्टी में
सड़ रही है l
आओ भाइयों !
बन्दूक फेकों और हाथ में ले लो
एक लाल गुलाब l
फिर से एक कलेजे पर कटार ठोकने से पहले,
जरा ताको ,उसकी माँ की ओर,
सड़क किनारे भीख की झोली हाथ में लिए खड़ी हैं,
एक असहाय विधवा माँ l
भाइयों!रुक जाओ !
बन्दूक फेकों और हाथ में ले लो,
एक लाल गुलाब l
यदि उन बिन बाप के बच्चों को
तुम चॉकलेट -लॉलीपॉप न दे सको,
तो कम से कम,
एक लाल गुलाब उन्हें देकर गोद में उठा लो l
उनके गाल छूकर एकबार तो बोलो,
'ऐ लड़के ! तू तो मेरा प्यारा लड़का है l"
जीवन तो एक ही है ,
आओ भाइयों !बन्दूक फेकों
और हाथ में ले लो
एक लाल गुलाब l

पहला विश्व-तृतीय विश्व,

जिंदगी तुम्हारी है,जिंदगी उनकी भी।
तुमलोगों को नाइक या एडिडास चाहिए।
पसंद के जूते यदि एक-दो साइज छोटे हो गए,
तो कंसर्नड हो,है न?
वे लोग बोतल को चपटे कर,
रस्सी से जूते बनाते हैं,देखो तो,
उनके लिए भी थोड़ी मिन्नतें रखना,
ITS YOUR LIFE,ITS THEIRS AS WELL,
तुमलोगों का मिनरल वाटर में लोकल ब्रांड नहीं चलता,
है न ?
किनले या बिसलेरी मस्ट,
वे लोग कुत्ते-बिल्लियों के साथ एक ही नाले में पानी पीते हैं।
उनके गले में,सरे बदन में,
इन्फेक्शन ही इन्फेक्शन है,
जिंदगी तुम्हारी है,जिंदगी उनकी भी है।
घर के सॉफ्ट टॉयज बच्चों को बोरिंग लग रहे है ?
वे लोग वन-जंगलों में सियार-कुत्तों की खोपड़ियों और,
कंकालों से खेलते हैं।
उनका बचपन सांस लेता है,कब्रों में।
ITS YOUR LIFE,ITS THEIRS AS WELL.
रोज़ रोज़ बर्गर पिज़्ज़ा या फिर फिश एंड चिप्स,
गेटिंग फ़्रस्ट्रेटेड विथ इट ,राइट ?
वे चारलोग,औसत उम्र सात है,
रातदिन एक सूखी रोटी को लेकर खींचातानी,
वे सड़क पर खुले आम लड़ते हैं।
अंततः,बचा-कुचा जो भी मिलता है, खाते हैं।
जिंदगी तुम्हारी है,जिंदगी उनकी भी।
तुमलोग तो हर साल,
अलमीरा,बिस्तर,तकियों को बदलते हो,
वे पत्थर पर सर रखकर सोते हैं,
फुटपाथ ही शयन है उनका ,

बहुत हो तो एक मग पानी से धोते हैं l
तुमलोग हर साल बदलते हो,
अलमीरा,बिस्तर,तकियों को,
पर उनलोग खुदा से भी नहीं करते शिकायत l
ITS YOUR LIFE,ITS THEIRS AS WELL.
घर बहुत पुराना हो गया,
थिंकिंग टू चेंज,
वो देखो,एक बच्चा भगाड़ में तड़प रहा है ,
अगर कोई एक प्लास्टिक शेड भी दे दे तो,
शायद इसी उम्मीद में है,
और दूर तो चील,हाइना,गिद्धों के चक्कर,
उनलोग तो बस दिन गिनते हैं रो-रोकर l
जिंदगी तुम्हारी है,उनकी भी l
डैड एंड मॉम इज टू मच केयरिंग,
और tolerate नहीं किया जा सकता,
है न?
वे माँ-बाप को कभी नहीं देखे,
hiv कब का ले गया उनलोगो को,
हड्डियां निकाला हुआ बालक,
अपनी दीदी की गोद में खेलता है,
हाय !
उनका निश्चित भविष्यत् अंतिम पड़ाव पर आकर,
झूला झूलता है l
IT’S YOUR LIFE,ITS THEIRS AS WELL.
जिंदगी तुम्हारी है, जिंदगी उनकी भी l

दस साल की भारतमाता

आसमां !आसमां !
बिटिया,दौड़कर आओ,भूख लगी है l
कहाँ गयी आसमा ?
"अभी आ रही हूँ अब्बू।।।।।।।।।।"
दोनों हाथों में दो कैन लेकर
दौड़कर आयी,
दस साल की आसमां,
मैले फ्रॉक पहनकर
नंगे पाँव दौड़कर आयी दस साल की आसमां l
अब्बू,भाईजान और दादा राजमिस्त्री का काम करते हैं l
दो मील चलती है छोटी आसमां l
बासी भात और आलू लायी है दोपहर के लिए l
ईंट के ऊपर बैठ जाते हैं चारों लोग l
थाली में थोड़ा पानी डालकर ,आलू के साथ
जल्द जल्द भात परोसती है ,अब्बू और दादा के लिए l
खाना परोसकर,अब्बू के गोद में,
सर रखकर
थोड़ा आराम करती है आसमां l
सर पर हाथ फेरकर अब्बू कहते हैं -
"आसमां !अब तुमलोग खा लो l "
एक थाली में खाना परोसकर ,
छोटे भाई की बांहे पकडे,
कुछ दूर जाकर बैठी आसमां l
भाई बहन खाए एक ही थाली में -
"भाईजान,खाने से पहले हाथ धो लो l "
आसमां थोड़ा सा चावल मुँह में लेती है ,
बाकी भाईजान खा लेता है मिनटों में l
आसमा के चेहरे पर मीठी मुस्कान ,
दुबले देह की हड्डियां निकल आयी है l
पहनावा एक मैला फ्रॉक l
कैन में बचे बासीभात के पानी को एक घूँट में पी जाती है आसमा l
अब्बाजान चिल्लाते हैं -
"आसमां !आसमां !बिटिया,तुम खायी हो ?
दौड़कर आती है दस साल की भारतमाता l
"मैं खा चुकी हूँ अब्बू ,इतनी चिंता मत करो l
दस साल की भारतमाता दौड़ती रहती है इस पार उस पार l
दस साल की भारतमाता दौड़ती रहती है ऐसे ही देश भर l

जिंदगी

काली एसी गाड़ी का पॉवर विंडो ,
धीरे धीरे नीचे उतरने लगा ,
जूठी कोल्ड्रिंक्स से भरी बोतल
आकर गिर पड़ी सड़क के बीच में l
हवा के झोंकों की तरह सभ्यता विलीन हो गयी ,
लोगों के जुलूस में l
कहानी यही ख़त्म हो सकती थी ,
क्योंकि काले शीशे से घिरी सभ्यता
ऐसे ही उपेक्षा करती आयी है ,बाहरी दुनिया के जीवन को l
जिंदगी नया कुछ चाहती है ,
नए चित्र बनाती है l
सड़क किनारे बसा एक जीर्ण परिवार,
पांच साल का लड़का प्राणों की बाजी लगाए
सड़क पार कर उठा लाता है,उस बोतल को l
चेहरे में ख़ुशी ऐसी ,
मानो दुनिया को जीत ली है l
ठिठुरते माँ बाप के पास आकर ,
ढक्कन खोल उन्हें कोल्ड्रिंक्स पिलाता है l
माँ के गोद की अपनी छोटी बहन को कोल्ड्रिंक्स पिलाता है ,
फिर एक घूट में बाकी पीने लगता है l
माँ बोतल छीन लेती है ,
बाप के मुँह में थोड़ा डालकर बाकी खुद पी जाती है l
काली कांच की उपेक्षा के साथ
शुरू हुई थी जो कहानी ,
जिंदगी ने कभी उसकी उपेक्षा नहीं की l
सड़क में पड़ी हुई
एक झुठी बोतल
एक अधमरे परिवार को
ऑक्सीजन देकर जिंदगी देती है l
ऐसे ही वे जिन्दा रहते हैं हज़ारों साल,
हर एक धिक्कार से जिंदगी के फुल खिलते हैं
सहस्त्र जीवन में l

पापा

पापा,कहाँ खो गए हो ?
आज भी साफ़ सुनाई देती है यह आवाज़,
"यू आर माय स्वीट लिट्ले डॉटर
आई लव यू सो मच। "
सुबह होते ही आज भी मैं,
सफ़ेद फ्रॉक और नील स्कर्ट पहनी छोटी सी,
बोनी बन जाती हूँ।
पापा,और एकबार जूते का लेस बाँध दो न ?
बारिश के दिनों में स्कूल जाते वक्त,
मुझे रेनकोट पहनाने के लिए आपकी बेचैनी,
आज भी भूल न पायी पापा।
मैं कभी भी आपकी अच्छी बेटी नहीं बन पायी,जो कहते थे,उसी का ठीक उल्टा काम करती थी।
बहुत नाराज़ हो जाते थे,फिर भी सँभालते हुए मेरी ओर तकते रहते थे।
आज कोई भी नहीं कहता,
“बोनी,नींद से जागकर ठीक से ब्रश क्यों नहीं करती ?”
“सुनती हो, बोनी को कम्प्लेन दो,”
प्यारी बिटिया! बाहर से आकर हाथ पैर क्लीन करना चाहिए, मेक इट अ हॉबिट।
आज कोई भी हाथ पकड़कर,
सड़क पार नहीं कराता ,पापा।
आपकी तरह किसी ने भी मुझे नहीं समझा।
आज भी शाम होते ही तातायी को लेकर सेंट्रल पार्क में जाती हूँ।
वह झूला झूलता है,स्लिप पर चढ़ता है,
और मैं बकुल के पेड़ के पास गोल गोल घूमती हूँ।
आपकी छुअन का एहसास करती फिरती हूँ, इधर से उधर।
पापा,जानते हो ?
तुम्हारी पासपोर्ट साइज की तस्वीर, मैं पर्स में लेकर घूमती हूँ।
पर निकालने का साहस नहीं होता, तुम्हारे चेहरे की ओर देख नहीं सकती।
आज और एकबार आएँगे पापा,मेरे पास ?
पैरों के पास कुछ देर बैठूँगी ,पापा

एकबार कहेंगे मुझसे फिर से,
"प्यारी बिटिया! टिफ़िन मत वापस लाना।
तवियत ख़राब हो जाएगी।"
स्कूल गेट के पास बोलेंगे फिर से,
"बोनी डोंट रन।
चोट लग जाएगी।
सामने देखकर चलो।"
पापा जानते हो मुझे रोज़ स्लीपंग पिल खाना पड़ता है।
आज और एकबार मीठे स्वरों में सुनाएंगे मुझे वही लोरी ?
“आओ तुम्हे चाँद पे ले जाए!”
पापा-पापा?
कहाँ खो गए हो ?
चारों तरफ सिर्फ अंधेरा
आप तो जानते हैं मैं अँधेरे से डरती हूँ।
लोडशेडिंग होते ही तुम चिल्लाते थे,
"प्यारी बिटिया! जहाँ हो वही रहो, हिलो मत, आई ऍम कमिंग।"
आज चारों तरफ घनघोर अंधेरा है।
पापा-पापा
एकबार तो मेरे पास लौटकर आइए।
एकबार मुझे वैसे ही पुकारिए।
एकबार बाधेंगे मेरे जूते की रस्सियों को।
एकबार बाल के फीतों को, आँखों के काजल को,
एकबार मुझे सीने से लगाएंगे ?
एकबार मुझे पुकारेंगे वैसे ही ?
एकबार महसूस करूंगी आपकी छुअन को,
एकबार बैठूंगी आपके पैरों के पास,
पापा -पापा ?
कहा खो गए हो पापा?

भूख

सड़क किनारे,
थोड़ा सा डाल, थोड़ा चावल
और मछली का एक टुकड़ा, रखकर आया था,
पहले कुत्ते की फैमिली ने भरपूर खाया।
उसके बाद आया ,
इस मोहल्ले, उस मोहल्ले से बिल्लियों का झुण्ड,
अब बिल्लियों की पूँछ को लेकर कौए खींचातानी कर रहे हैं।
एंट्री चाहिए।
भूख!
थोड़ा सा डाल थोड़ा चावल
और मछली का एक टुकड़ा।
उसके बाद आए मैंने,चूहे ,
एक गौरैया चावल का एक दाना लेकर ,नीम की टहनियों पर बैठे
अपने बच्चों के पास उड़ गई ,
चोंच से चोंच मिलाकर बच्चे को खिला दी।
एक कौआ,
मुहल्ले भर के कार्निशों पर, ऊँची टहनियों पर,
इस छोर से उस छोर तक,
मछली का एक काँटा लिए
उड़ता फिर रहा है।
मछलियों के काटों को थोड़ा-थोड़ा करके चखकर खा रहा है।
मुँह में पकड़कर उसे लेकर जाता है सेफ प्लेस में।
भूख!
जैसे ही एक मच्छर को मारा,
उसके मृत शरीर को लेकर लाल चीटियों की महफ़िल जमती है।
स्पेशल डिश है आज।
भूख़, महा भूख़ ।

भोजन दो

वे बड़े असहाय है,
थोड़ा सा चावल दे दो प्लीज l
खाने के अंत में पड़ा रहने वाला थोड़ा सा सफ़ेद चावल l
हमारे पास जमीन हैं, घर है l
उनके पास तो कुछ भी नहीं है l
वे सर्वहारे हैं l
हमारी अपनी नौकरी है, व्यवसाय है l
उनके पास है बस कुछ लम्बी साँसे, वे बड़े असहाय हैं l
थोड़ा सा चावल दे दो, प्लीज l
खाने के अंत में पड़ा रहनेवाला थोड़ा सा सफ़ेद चावल l
हमारे पास टीवी, फ्रीज है ,
जीने की वजह है l
उनके पास कुछ भी नहीं है, वे सर्वहारा है l
हमारे घर में ड्राइंग रूम है, डाइनिंग रूम भी है l
उनको जिंदगी ने दी है केवल दिन और रात l
हमारे पास क्लब है, एंटरटेनमेंट भी है l
उनको जिंदगी ने दी है सिर्फ भूख l
वे बड़े असहाय है l
थोड़ा सा चावल दे दो प्लीज,
खाने के अंत में पड़ा रहनेवाला थोड़ा सा सफ़ेद चावल l
सड़क के कोने पर हो या छत पर,
दीवार हो या कार्निश पर,
कुत्ते-बिल्ली, चूहे-कौए,गौरैए चींटी ,
सबकी भूख मिटेगी l मैं निश्चिंत हूँ l
इसलिए प्लीज, डस्टबिन में फेंक मत देना l
वे बड़े असहाय है l
थोड़ा सा चावल दे दो प्लीज,
खाने के अंत में पड़ा रहनेवाला थोड़ा सा सफ़ेद चावल l

बचे हुए भोजन का उत्सव

मछली के काटें,
खाए हुए मछली के छिलके,
मछली के बचे हुए हिस्से
डिनर के बाद ये सारे कचड़े,
सड़क किनारे फेककर आया था,
रास्ते की बिल्लियों ने पसंदानुसार उसका सेवन किया।
कौआ एक हिस्सा लेकर उड़ गया।
दूर गगन की नीलिमा से होते हुए,
गौरैयों का झुण्ड आया चहकते हुए,
चावल के एक एक दाने को लेकर मानो त्यौहार मनाया जा रहा है।
काली चींटी एक लम्बा पीला दाना मुँह में लेकर,
तेज़ गति से सड़क पार करने लगी।
मैना और कौवे लड़ रहे हैं,
कौन पहले खाएगा,
किसी का बचा हुआ भोजन,किसी के लिए है त्यौहार।

अनाहार कब मिटेगा ?

आज भी भूखे लौटते हैं घर में,
उनकी बेबसभरी आँखों में आंसू झलकते हैं l
आज भी भूख से पीड़ित,
देह व्यवसाय में उतरती हैं मेरे घर की बहने ,
सपने में आज भी परोसे हुए भोजन की थाली देखते हुए दिन बीतते हैं l
जमाव देखते ही पूछता हूँ
अनाहार कब मिटेगा?
आज भी सिर्फ झूठे वायदे सुनता हूँ,
बड़ी बड़ी बातें
आज भी बहकlती हैं हमे,
आज भी करोड़ो बेचैन आखों की भाषा मानो पूछती हैं मुझे ,
अनाहार कब मिटेगा ?

फूल

कृपया फूलों को मत तोड़ो,
पूजा के फूल कहकर कुछ नहीं होते हैं।
देवताओं के चरणों पर पुष्पांजली,
देवता नहीं लेते।
जो व्यक्ति चरम अवसाद की घड़ियों में अकेला है,
उसे एक शेफाली फूलों से लदे वृक्ष के नीचे ले जाकर देखो,
उसे चैन होगा और सुकून का एहसास होगा।
जो व्यक्ति असाध्य रोग से पीड़ित हैं,
उसकी यातनाओं का निवारण करेगा
एक फूलों से भरा बगीचा।
कृपया फूलों को मत तोड़ों।
जो लोग एक वक्त भूखे रहकर भूख की ज्वाला से तड़पते हुए
अँधेरे में बैठकर सिसक रहे हैं,
उनकी पीड़ाओं को दूर कर देगा,
सड़क किनारे खिले हुए रहनेवाले,
गुलाब,चंद्रमल्लिका फूलों के गुच्छे,
इनकी यातनाओं पर मरहम लगाने के लिए,
देवता फूल खिलाते हैं।
इसलिए फूलों को मत तोड़ो।

जीवन उनका भी है,

जीवन हमारा है,जीवन उनका भी है।
मैं फ्लैट में रहता हूँ,वे बस्तियों में ।
मेरा प्रेजेंट एड्रेस है,परमानेंट एड्रेस भी है।
दखल की जमीन पे उनका शांतिपूर्ण जीवन।
या तो दमदम रेल लाइन के किनारे,
या तो बागजोला की नहरपट्टियों में,
जीवन हमारा है,जीवन उनका भी।
मैं ब्रेड कटलेट खाता हूँ,
थोड़ा सा सलाद और फ्रुइटजूस,
उनको जिंदगी ने सिर्फ पीड़ा ही दी है।
वे मैदान में काम करते करते पसीने से लथपथ,
जीवन हमारा,जीवन उनका भी।
मैं कविताएं लिखता हूँ,
वे कविता के पन्नो को फाड़कर
ठोंगे बनाते हैं।
मैं चैन की तलाश में ,
पन्नो पर लिखता रहता हूँ।
वे पन्नो को फाड़कर बेहद खुश होकर,
ठोंगे बनाते हैं, बेचते हैं।
ठोंगे बेचते हैं, ठोंगे बेचकर प्याज और बासी चावल खाते हैं।
जीवन हमारा है, जीवन उनका भी।
जीवन के डर से आजकल,
जीवन से ही मुँह छिपाना पड़ता है,
वे जीवन की तलाश में,
जीवन की ओर झुके रहते हैं आजीवन,
जीवन हमारा है,जीवन उनका भी।

प्राकृतिक

गाड़िया स्टेशन के पास साफ़ देख रहा था वह अद्भुत कहानी।
बूढ़ी माँ की उम्र अस्सी के ऊपर होगी।
साथ में साढ़े पांच साल की पोती,
बूढ़ी माँ रेल लाइन के किनारे कचड़े के डिब्बे से
प्लास्टिकसे बने चाय के गिलासों ढूंढ निकाल रही है ,
पोती गिलासों को बस्ते में भर रही है।
पता नहीं क्या होगा इन गिलासों से
दिनभर में इन गिलासों को इकठ्ठा करके कितने पैसे मिलेंगे ?
लेकिन निर्लिप्त होकर दोनों कचड़े उठाते हैं।
क्या भीषण दरिद्रता ने इन्हे घेर कर रखा है,क्या कोई सोच सकता है ?
दादी घुटने टेक कर बैठकर चाय के कप में से कचड़े उठा रही है।
उनके पीठ पर चढ़कर बैठती है, पांच साल की पोती।
दादी बार बार पोती को झुलाती है।
फुस्फुस कर क्या कहानी सुना रही है,
शायद पक्षीराज घोड़े की कहानी,
पक्षियों की कहानी,
पोती कभी दादी के गले से लगकर कहानी के बीच में ही सो जाती है।
प्रकृति उनपर स्नेह बरस रही है ।
भगवन जिन्हे भोजन नहीं देते, रोटी नहीं देते,
शर्म ढकने के लिए मापकर देते हैं कपडे,
उनके लिए शांति बरसा देते हैं।
दोनों हाथों से प्यार देते हैं।
इतना सा अगर न मिलते तो उनके बचने के सारे रास्ते बंद हो जाते।
दादी के पीठ पर बैठ गले से लगी,
पोती पक्षीराज घोड़े की कहानियां सुनते सुनते सो जाती हैं।
दादी झुककर प्लास्टिक के गिलासों को ढूंढ़ती फिरती हैं,
कचड़े के डिब्बों में,
आसपास मुस्कुराते हुए,
सफ़ेद,लाल,नील जंगली फूल,
खिले हैं झोपड़ियों में,झाड़ियों में,
उनके स्नेह और प्यार भरे स्पर्श में।

मीलों चलना है

कई मीले चलना अभी भी बाकि है,
जमीन के निकट अभी तक नहीं पँहुचा मैं,
उन माओं की चौखट पर अभी तक घुटने टेककर नहीं बैठ सका मैं,
जिनके घरों में आजभी चावल नहीं पका,
अभी तक उन स्कूल के बच्चों से नहीं मिल पाया,
जिनकी सुबह होती है एक वक्त के मिड डे मील की उम्मीद से,
सुना है, उस गांव में कई लोग हैं, जो आज भी मीलों चलते हैं,
सिर्फ पानिय जल के लिए,
शायद ही ट्रेन के डिब्बों में देखा है मिर्च मुरा और पानी के साथ-
लोगोके आनंद भरी जात्रा,
उनकी विमर्श भरी बातें -
घर में उनकी माँ की आँखों में आज भी अँधेरे हैं।
देर है सांझ उतरने में,
मगर फिर भी,
माँ की आँखों का इलाज आज भी नहीं हो पाया।

कई मीलें चलना अभी भी बाकी है,
फुटपाथ में बैठकर उनलोगों के एक बनकर,
लाइन के किनारे,
ईट के चूल्हे में पके चावल और आधे सड़े हुए कुछ आलूओं को,
अभी तक स्वाद नहीं लिया।
,अभी तक,उनकी झोपडी में एक ही चादर बिछाकर
नहीं सोया।
अभी तक समझा नहीं,
रात एक बजे टूटे रेडियो में एक माझी के खबर सुनने की बेचैनी कैसी होती है?
आज भी शायद बीच दरिया में जा न सकूँगा,
आज भी मेरा लाडला भूख की तड़प से नहीं सोएगा।
कल फिर पूरे रविवार को मिड डे मील का अभाव रहेगा,
आज भी मेरी आँखें नहीं देखी है उस लाडले की छवि को,
नाक से रुमाल हटाकर नहीं देखा,
वहाँ भी,
मेरे जैसा ही एक इंसान है,
आज तक डस्टबिन से जूठा खाना उठाने वाली,
उस लड़की के पास जाकर नहीं बैठा,
कभी जानना नहीं चाहा,
क्या है उसके दर्द और दुर्गति के कारण।
इसलिए तो,
चालीस पार करके भी जानता हूँ,
अभी भी मीले चलना बाकी है,
अभी भी मीले चलना बाकी है।

रोटी दे !,

उस आदमी को मैंने,
ढलती शाम की धुंधली रौशनी में देखा था,
वह साल के पेड़ों पर हथौड़ा पिट रहा था l
एकबार,दो बार,बारबार पिट रहा था,
वह बावला अधेड़ उम्र का आदमी मुड़मुड़कर
पश्चिम प्रान्त के लाल-पीले सूरज को देख रहा था l
बाईपास के किनारे तेज़ गति से सांझ उतर रही थी l
घना अंधकार और भी गहन है,
उसके अंतर में |
आज भी तो उसके काम बाकी रह जाएंगे l
कांट्रेक्टर की गाड़ी की आवाज़ आते ही उसकी सिसक छाती से उठते हुए मानो गले के पास आकर भटक जाती है l
बाबूसाहब! काम ख़त्म नहीं हुआ, सौ रूपया दे दो l
आटे, सब्जियां खरीदूंगा! बाबूसाहब l
आठ पेट भूख से तरस रहे हैं,
बाबूसाहब सौ रूपए दे दो l
ढलती शाम और नहीं रही l
बाईपास के आसमान को घने अमावस के काले बादलों ने ढक लिया है l
थकेहारे शरीर को घर तक घसीटकर ले चलना,
मानों हर रोज चौकट पर एक ही शव खड़ा है,
“मेरे घर में बच्चों का जन्म लेना ही पाप है l "
कातर स्वरों में शर्म, घृणा और डर l
एक भी रोटी क्या नसीब नहीं होगी ?
सूरज उगने से पहले ही वह इंसान
घर छोड़कर निकल पड़ता है,
सड़को, मैदानों, गलियों
को पारकर भागते हुए आगे बढ़ जाना चाहता है,
और दूर जाना चाहता है तन मन,
जहाँ बेटे बेटियों की आवाज़ नहीं पहुंचेगी l
आँखे खुलते ही वे चिल्लाएंगे-
“अब्बू,ओ अब्बू
एक रोटी दे दो अब्बू l”

वापस चाहिए

कोलकाता,तुम संग्रामी बनो,उससे कोई ऐतराज नहीं,
मुझे मेरी निस्तब्धता वापस चाहिए।
तुम गवाह बने रहों हज़ारों लोगों के संग्रामी जुलूसों के,
या कॉफ़ी हाउस में तूफ़ान लाने वाले,
कई प्यालों की झंकारों की उपज,
ऐतराज नहीं,
मुझे तो मेरी निस्तब्धता वापस चाहिए।
कोलकाता,तुम कठोर बने रहो,कोई बात नहीं,
मुझे मेरे जज़्बात वापस चाहिए।
तुम सफेदपोश कर्मरत बाबुओं और मेमसाहबों के पसीने से लथ -पथ शरीर को,
एक झलक ताज़ी हवा न दे सको,
कोई बात नहीं,
मुझे मेरे जज़्बात वापस चाहिए।
कोलकाता, तुम , एकतरफा बने रहो,कोई बात नहीं,
मुझे मेरी अंतर्दस्ति वापस चाहिए।
अमीर की नज़रों में रूपवान और,
भूखे के दिल के जखम बने रहो,
ऐतराज़ नहीं।
मुझे मेरी अंतर्दृष्टि वापस चाहिए।
कोलकाता,तुम ख़ूबसूरत बनो,
ऐतराज़ नहीं,
मुझे तो खुला आसमान वापस चाहिए।
तुम पोस्टरों,बैनरों,प्लेकार्डों में सुसज्जित रहो,
या विक्टोरिया की सुन्दर परी बनो,
ऐतराज़ नहीं,
मुझे खुला आसमान वापस चाहिए।
कोलकाता,
तुम कलाकार के चित्र बनो,
ऐतराज़ नहीं,पर,
मेरे बच्चे के सीने को ताज़ी हवा और उन्मुक्त रौशनी वापस दो।

क्या लिखूं मैं ?(1)

ये शाम कुछ अजीब सी है।
कुछ धुंधली, कुछ उदास सी।
धीरे धीरे डोलते हैं नदी-आसमान,पेड़ के पत्ते,
दूर कहीं बजते हैं रवीन्द्रनाथ के गीत,
ऐ मन उदास, कहता है कुछ और लिख,
या आज भी लिखूं कुछ और। ....

मई,२०२० ,
लॉकडाउन में मजदूर भारत,गरीब भारत पैदल चल रहा है।
श्रमिक-मजदूर प्रवास से अपने घरों को वापस लौट रहे हैं।
दिल्ली से बिहार,
आंध्र से असम,
लखनऊ से मिदनापुर पहुंचेंगे सिर्फ पैरों से चलकर,
पंद्रहसौ किलोमीटर राह चलेंगे।
पैदल चलता है मजदूर भारत,गरीब भारत।
गोद में बच्चे को लेकर माँ,कंधे पर बेटे को लेकर बाप,
चलेंगे हज़ारों मील।
दिनभर पैदल चलकर, थके हारे
सड़क किनारे सो गया है पूरा परिवार,
पांचवे दिन नींद में ही, गोद का बच्चा मर गया।
क्या लिखूं मैं?
मृत शिशु का अंतिम संस्कार कर,
जोर जोर से चीख रहे हैं माँ-बाप और बेटे।
फिर भी राह चलना नहीं रुका।
कितने कितने बच्चों को,
कितने हज़ार माओं की हड्डियों को
या लज्जा को,
सड़क के किनारे चील और गिद्ध नोचकर खा रहे हैं।
क्या किसी को खबर है,

किसी को खबर नहीं।
क्या लिखूं मैं?

लगभग बीस जन रेललाइन के किनारे से गुज़र रहे थे,
दिनभर चलते हैं,रात को थककर सो जाते हैं रेललाइन के ऊपर ही।
रोज़ सुबह आँखें खुलती हैं,फिर चलते हैं।
फिर एक दिन रात को उन्हें कुचल देती है,
श्रमिक स्पेशल ट्रैन।
बीसों में एक की भी नींद नहीं टूटी,
तेज़ रफ़्तार से आती हुई ट्रैन की तेज लाइट और हॉर्न से भी,
अगले दिन सुबह टीवी में समाचार देखा,
रेल लाइन के ऊपर पड़ी हुई शव,
और,
इधर उधर बिखरी थी खून से लथपथ रोटियां,
क्या लिखूं मैं ?

एक तरफ नदी आसमान,हल्की छांव,
मंद पवन में पत्ते हिल रहे हैं,
बरसात की हिमभरी हवाएं,
तन को मानो छू लेती हैं।
दूसरी तरफ,
कटे हाथ,कटे सर,चारों तरफ बिखरे हुए,
रेललाइन के इस पार से उस पार,
सीने को चीरता है रुदन,
क्या लिखूं मैं, इसी सोच में हूँ सारी शाम।

क्या लिखूं मैं ?(2)

क्या लिखूं मैं?
शाम से यही सोचता हूँ.....
अकेले छत पे बैठे बैठे,रात के आठ बज रहे हैं।
सामने खुला आसमान,
बादल तैरते जाते हैं सफ़ेद रुई की तरह,
नीम के पेड़ के साथ लगे हुए अकेला बैठा मैं,
सोच रहा हूँ,
इस सुनहरी सांझ को लेकर कुछ लिखूं,
या,
सुबह वैनरिक्शे में सब्जी बेचने आनेवाले
उस नौजवान के फ़्रस्ट्रेशन को लेकर लिखूं
“भाईसाहब,सब्जी लेंगे ?”
“परवल कितने का दोगे भाई ?”
“भाईसाहब,जो मर्जी,वही कीमत दीजिए ,
सुबह सुबह चारसौ रूपए गुम हो गए हैं,
और क्या होगा ?
पूरा ही नुकसान हुआ”
लड़का बोलता ही जा रहा था ,
“ग्रेजुएशन के बाद और पढ़ने का मन था,पर
पिताजी का देहांत हो गया,माँ बिस्तर में अपाहिज पड़ी है,
बहुत सारी दवाओं की जरुरत हैं !
इन सबके बीच रूपए खो दिए मैंने,
जो देना है,दीजिए चाचा,नहीं देंगे,फिर भी चलेगा। ....”
क्या लिखूं मैं ?
शाम को मास्क पहनकर मैं ,
 कुछ जरुरी काम से, मोहल्ले के मोड़ से होते हुए जा रहा था
वही मौसी हाथों में प्लास्टिक लिए भीख मांग रही है।
“ऐ बेटे! कुछ पैसे दो न !”
“मौसी,आपको कितनी बार दूँ ?
रोज़ ही तो मांगती हो”,

“क्या करूँ बेटा,आँखें खुलते ही रोज़ ही तो भूख लगती है
पोते-पोती चीखते हैं भूख से पीड़ित ,
दारू के नशे में चूर दरवाज़े के पास पड़ा
मेरा बेटा भी गाली देता है
क्या करूँ बेटा,तुम ही बता दो !
दे दो न कुछ पैसे”
यकीन मानिए,मेरे पास उसदिन जेब में मनीबैग नहीं था
क्या लिखूं मैं?
उसदिन दोपहर को जैसे ही मैं डाइनिंग टेबल पर
लंच करने बैठा,
कॉलिंग बेल बजने लगा,
बरामदे में जाकर देखा
वही अगरबत्तीवाला पिंटू
माँ छोड़कर चली गयी है,पापा नहीं हैं
जन्म से ही एक हाथ पैरालाइज़्ड
“भाईसाहब,कोई अगरबत्ती नहीं लिया
सुबह से घूम रहा हूँ ,
और क्या होगा ?
तुम अगर अगरबत्ती लोगे,तब भी खाने के पैसे नहीं होंगे”
क्या लिखूं मैं ?
सामने तारों से भरा आसमान,
 सफ़ेद रुई की तरह, बादल तैरते जा रहे हैं l
पूनम के मुस्कुराते चाँद को लेकर लिखूं ,
या झुलसते रोटियों को लेकर लिखूं l
शाम से यही सोच रहा हूँ ,
कि क्या लिखूं मैं ?

क्या लिखूं मैं ?(3)

क्या लिखूं मैं?
चारो ओर घनघोर अँधेरा,
मैं मच्छरदानी के भीतर चैन से सोया हुआ,
आनंद ले रहा था,
बाहर निरंतर चलते बरसात के गीत।
सोच रहा हूँ अभी लिखूं कि,
जंगली पत्तों पे टिपटिप बरस रही हैं बरसात की बूंदे,
टिन के छत पर पानी बरसते हैं,झरझर झरझर। ..
या लिखूं,
नेताजीनगर बसस्टैंड वाले मनु की कहानी,
'चाका पगला' के नाम से हम जानते हैं उसे।
पहनावे में एक फटा हॉफपैंट, बटन नहीं है,जिपर नहीं हैं ।
रस्सी से बंधा हुआ पैंट,और पूरा नंगा शरीर।
एक डंडे के ऊपर चक्के लगाए,
दिनभर राह में चक्के चलाता हैं।
पांचसौ रूपए का एक नोट मिलते ही भागने लगा,
"ओ भाईसाहब! ,कौन पांचसौ रूपए छोड़कर भाग रहे हैं?
ओ भाईसाहब पांचसौ रूपए छोड़कर भाग रहे हैं/...।
उस आदमी को ढूँढ़कर,रूपए उसे वापस कर,
चैन से चक्के चलाता हुआ आगे बढ़ता जाता है।
दो मिनट बाद ही,
राह चलती एक मैडम को पुकार रहा है ,
"ओ मैडम,दस रूपए दोगी ?
दो न दस ठो रूपए,सुबह से कुछ नहीं खाया .....।
मैडम कपड़े/रुमाल से नाक को ढकते हुए तेज़ रफ़्तार से आगे बढ़ जाती है।
क्या लिखूं मैं ?
सोच रहा हूँ अपने कामवाली मौसी की कहानी लिखूं।
कोरोनाकालीन लॉकडाउन में,
काम में जाने के लिए सुबह सुबह घर से निकली थी।
महिला पुलिस ने पूछा था
"क्यों निकली थी ?"

‘क्या करूँ मैडम ?
इस पेट के लिए ,…..
मेरा तो घर ही नहीं चल रहा है l “
मौसी के हथेलिओं के पीछे,पैरों के ऊपर,
डंडे की निशानी l
“भाईसाहब !
बोलो तो क्या करूँ ?
“कोरोना से मरूँगी या अनाहार से मरूँगी ,
या मरूँगी पुलिस के डंडे की मार से l”
क्या लिखूं मैं?
स्वप्न भैया की नौकरी चली गयी है l
मोहल्ले के मोड़ पर अंडे और आलू लेकर बेचने बैठे हैं l
बगल से जैसे ही गुज़रा हूँ,….. स्वप्न भैया की पुकार !
“क्यों कुछ नहीं लोगे क्या ?
तुमलोग नहीं लोगे तो कौन लेगा ?
“आ रहे हैं रुको।“ ….. कहकर किसी तरह भाग आया
क्या लिखूं मैं ?
बाहर जंगली पत्तों पर टिपटिप बूँदे गिरती ही जाती है ,
बूँदे गिरती हैं नीम्बू के पेड़ों पर,टीन के छतों पर ,केले के पत्तों पर,
भारत के हर मोहल्ले,हर गली में,
गरीब के आसूँ बरसते जाते हैं
बाहर अभी भी टिपटिप बरसती हैं बूँदें
घनघोर अँधेरे में अकेला सोता हुआ सोच रहा हूँ
क्या लिखूं मैं?

क्या लिखूं मैं?(4)

क्या लिखूं मैं?
चारो तरफ अँधेरा है,
छत पे बैठकर,
खाली बदन पे सिर्फ हाफ पैंट पहने हुए,
मुर्रा खाने के साथ साथ धुएँ वाली लाल चाय पी रहा हूँ।
कुछ लिखने के लिए जल्दी से मुर्रा ख़त्म करता हूँ।
बगल में न जाने किस घर के टीवी सीरियल में अजीबोगरीब समीकरण चल रहा है,
सड़क पे नियोन की नीली रौशनी,
और न जाने क्या क्या है लिखने को,
मेरी कलम मानो हवा से बातें करती हुई आगे बढ़ रही है,
सोच रहा हूँ लिखूं और भी,और भी बहुत कुछ। ....
या लिखूं उस लड़की की जिंदगी की कहानी जो सुबह सुबह झाड़ू लगाने आती है।
वह लड़की सुबह छः बजे निकलकर
इस मोहल्ले से उस मोहल्ले में जाती है,
मुँह में सीटी बजाते हुए,
कचड़े फेंकने वाले टिन की गाड़ी को खींचते हुए लेकर आती है।
एक तरफ सड़क पर झाड़ू लगाकर,
बेलचे से कचड़े उठाती है,
दूसरे तरफ सब घरों से लोग गाड़ी पर कचड़े फेंक देते हैं।
सड़ी हुई सब्जियां,पिछले दिन का बासी खाना,
यूज़ड नैपकिन,बच्चों के यूज़ड पैड,
दारू का खाली बोतल,
हर एक घर से सबकुछ फेंके जाते हैं।
गाड़ी से कचड़े गिरते जा रहे हैं,
और वह लड़की बेलचे से ठुस ठुस कर घुसा रही है।
भैया,एक गाड़ी यदि भर गयी हो तो उसे हाफ किलोमिटर दूर तक ले जाकर वैट में फेंककर,
फिर लौट आऊँ।
क्या लिखूं मैं

अभी दिन के बारह बज रहे हैं।
लड़की के चेहरे का मास्क गले तक उतर आया है।
गन्दा शरीर पसीने से तर -तर है।
भैया,पति दारू पीते पीते मर गया।
हमलोग कॉर्पोरेशन के कोंट्राक्टुअल लेबर हैं ।
नो वर्क,नो पे।
एकदिन दोपहर के दो बजे देखता हूँ,
कचड़े से भरे हुए गाड़ी को साइड में रखकर,
सड़क पे पैर पसारकर बैठ गयी है।
एक थाली घुघनी और मुर्रा खा रही है।
क्या लिखूं मैं
जानते हैं,सीटी बजाते हुए,
किसी के घर का गेट पार करने से ही,वह चिल्ला उठता है।
कोई कोई तो गालियां भी देता है।
दो कदम आगे आकर कचड़े नहीं फेंक सकते।
ऊपर से काले पैकेट फेंकते हैं,जिसके अंदर बीमारलोगों की मलमूत्र से भरे पैड हैं।
भैया,इसी तरह मलमूत्र से भरा है मेरा जीवन।
क्या लिखूं मैं
चाय और मुर्रा खाते खाते,
छत पर टहल रहा हूँ,
सोच रहा हूँ लिखूं,
मध्यवर्गीय कोलोनी की प्रगति की कथा,
सड़क पे चमकती नियोन की रौशनी,
या,
वास्तविकता की जमीन पर खड़ी
गरीब मजबूर लड़कियों की जिंदगी के घनघोर अँधेरे की कथा ,
क्या लिखूं मैं ?
सर पे विचारों का पहाड़।

क्या लिखूं मैं?(5)

बरामदे में बैठकर सोच रहा हूँ,
क्या लिखूं मैं?
सोच रहा हूँ इस अजीब सुबह को लेकर लिखूं,
चारों तरफ आलस्य और सौम्यता,
कितने रंग-बिरंगे टिड्डें उड़ रहे हैं,
 कितने पंछी न जाने किन किन भाषाओँ में बात कर रहे हैं,
या लिखूं,
उस बुढ़िया मछलीवाली को लेकर,
जो कल दोपहर को घर के नीचे आयी थी?
एक वैनरिक्शे में कुछ मछलियां जैसे
रोहू,पॉम्फ्रेट,मोयरा और पोयभोला,सजाकर,
घर के नीचे खड़ी चिल्लाकर पुकार रही थी,
बाबूसाहब,मछली लेंगे ?
चार घंटो से चल रही हूँ,
मेरी एक भी मछली नहीं बिकी।
बूढ़ी माई और उनके बेटे,
चेहरे पर मास्क नहीं,
पेट में भोजन नहीं,
कौन सिखाएगा उन्हें की मास्क पहनना है ?
बूढ़ी माई चिल्लाकर रोने लगी,
ओ बाबूलोग !कोई तो घर से निकलो,
किसी ने मेरी मछली नहीं ली।
घर के बच्चें भूख से रो रहे हैं !
क्या लिखूं मैं?
दौड़कर बरामदे में आया,
मछलियों की हालत बहुत ख़राब सूझी मुझे,
"मौसी,एक किलो कितने का है?"
कुछ भी हो,सोच समझकर दे दो न बेटा।

मतलब?
खैर,मन न होकर भी दो किस्म की मछलियाँ ली।
बुढ़िया कीमत का हिसाब कुछ भी नहीं समझती,
वह बोली,तुम हिसाब कर दो न बेटा
क्या लिखूं मैं ?
बूढ़ीमाई के बेटे से पूछा,
कीमत नहीं बोल सकते,हिसाब करना नहीं आता?
कैसे समझोगे लाभ हुआ या नुकसान?
बाबू,माँ लोगों के घर काम करती थी,
मैं वैनरिक्शा चलाता था,
कोरोना के कारण,
दो महीने से काम धंधे बंद हैं।
इसलिए अगर मछली बिके,
तो कुछ आमदनी होगी,
हमारे पेट भी बचेंगे।
बूढ़ीमाई सड़क पे मछली काटने बैठ गयी,
"बूढ़ी माई,मछली काटने की जरुरत नहीं,हमलोग काट लेंगे।"
बोली –"तुमने मुझपर दया की,
नहीं काटके दूँ,यह क्या कहते हो"
कहिए,क्या लिखूं मैं ?
सफ़ेद सुबह,
सफ़ेद बगुला उड़ जाता है,
दूर नीलिमा में,
प्रकृति को लेकर बहुत कुछ लिखने की इच्छा है,
या लिखूं,
इस निरक्षरता,अशिक्षा,भूखमरी को लेकर बची,
हड्डियों को निकाली हुई बूढ़ी माओं की व्यथा-कथा,
क्या लिखूं मैं सोचता हूँ सारा दिन।

क्या लिखूँ मैं (6)

१ जून २०२०,
मेरा पचासवाँ साल पूरा हुआ,
इस दिन को अभी भी मेरी माँ अपने हाथों से खीर बनाती हैं।
शाम को जब तक मैं घर न लौटूँ,मिठाइयां सजाए हुए बैठी रहती है।
इस लॉकडाउन में भी,
माँ के प्यार में कोई कमी नहीं।
सोच रहा हूँ बहुत कुछ लिखूं,
माँ का प्यार,जकड़े हुए न जाने कितनी यादें,
स्कूल जीवन की कितनी कहानियाँ।
या लिखूं,
और कुछ माओं की कथा,
बाप की कथा
बेटों की कथा।
मेरी बेटी स्कूलटीचर है,
गूगल मीट पे क्लास फाइव का ऑनलाइन क्लास ले रही है।
छोटे सुरभित के साथ और पाँच छः जन क्लास कर रहे हैं।
कैसे हो सुरभित ?पढ़ाई कर रहे हो?
मैडम अच्छा हूँ,बहुत अच्छा हूँ।
तुम्हारे माता-पिता कैसे हैं सुरभित ?
मैडम,पिताजी के पास अभी काम नहीं हैं, घर में ही रहते हैं।
इसलिए उदास रहते हैं।
क्यों उदास रहते हैं?
मैडम,पिताजी के पास कुछ भी पैसे नहीं हैं,
माँ घर में सो सोकर रोती है, झगड़े होते हैं।
इसलिए पिताजी उदास रहते हैं।
क्या लिखूँ मैं ?
दोपहर का खाना खाए हो, सुरभित ?
हाँ,मैडम खाया हूँ।
क्या खाए हो ?
मैडम,डाल और चावल।

और क्या था
और कुछ भी नहीं था मैडम,आप चिंता मत कीजिए।
मैंने बहुत अच्छा खाया,मैं अच्छा हूँ।
क्लास फाइव में पढ़ता है सुरभित।
मैं दरवाजे के पास आश्चर्यचकित खड़ा हूँ
क्या लिखूं मैं ?
साथ ही और एक आवाज़ सुनाई पड़ी,
मैडम,मैं मनिरुल हूँ,मैं कहूँ।
हाँ मनिरुल,बोलो,
मैडम,मेरे पापा भी कोलकाता में सिक्योरिटी गार्ड की नौकरी करते थे,
अभी ट्रैन बंद है,इसलिए काम पे नहीं जा सकते,
मनिरुल लगातार बोलता जा रहा था।
मैं भी बासी भात खाया हूँ।
सुखी मिर्च,नमक और पियाज से
बहुत अच्छा खाना था,क्या टेस्ट था
दादा-दादी,माँ-पिताजी सब एकसाथ बैठकर खाए हैं।
बहुत मजा आया मैडम।
मैडम,आपको पता है,मेरी माँ भी सिर्फ रोती रहती हैं।
बड़ी बुद्धू है मेरी माँ।
मैडम,मैं भी बढ़िया हूँ।
क्या लिखूं मैं
एक तरफ एक माँ की उम्र सत्तर साल की है,
लंगड़ाकर चलती है,
सुबह सुबह मीठी दही और खीर सजाकर रखी है,अपने बेटे के लिए स्पेशल डिश।
अपनी माँ के सैक्रिफाइस को लेकर लिखूं
या दूसरी माओं के आसुओं,
अपने आठ साल के बच्चे के थोड़ा सा दाल चावल खिलने की लड़ाई को लेकर लिखूं,
क्या लिखूं मैं सोचता हूँ हर दिन।

क्या लिखूँ मैं(7)

अभी रात के एक बज रहे हैं।
लाइट ऑफ करके घर के सभी लोग गहरी नींद में हैं।
मैं फर्श पर सोया हूँ।
अँधेरे में पन्नों के बाद पन्ने लिख चला था,
भगवान जाने क्या लिखूँ मैं
अजीब सी गहरी रात।
धरती पर घनघोर अंधकारमय भविष्यत् लेकर आया है,हज़ारों लड़के-लड़कियों की
बेरोजगारी,अनिश्चयता,
उसको लेकर लिखूँ
या लिखूं मेरे घर की कामवाली की जिंदगी की कथा
राखी नाम है उसका,
रोज़ सुबह चार बजे से शाम के चार बजे तक उसका ड्यूटी ऑवर है।
रोज़ दूर के लक्ष्मीकांतपुर से टालींगंज आती है।
तीस मिनट साइकिल चलकर स्टेशन आती,
स्टेशन में साइकिल रखकर,
प्रातः पाँच बीस की ट्रैन पकड़ती है।
सात बजे बाघजतिन स्टेशन में उतरती है।
फिर चालीस मिनट चलकर मेरे घर में आती है।
आठ हज़ार रूपए तनख्वाह है महीने की,
जाना-आना मिलाकर सोलह घंटे गधे की तरह काम करती हैं।
क्या लिखूँ मैं
कहा था -राखी,रोज़ इस तरह से जाना-आना छोड़ दो,थकान कम होगी,
यही रह जाओ।
“भैया,चौदह साल की थी जब माँ-बाप ने शादी करवा दी थी,
दस साल घर करने के बाद पति ने निकाल दिया।
बेटे को लेकर मायके में रहती हूँ।
उन वृद्धों को देखने के लिए कोई नहीं हैं।”
लड़की रोज़ शाम के चार बजे,
ट्रैन में किसी तरह लटककर रात के नौ बजे घर लौटती है।
भैया,भोर के तीन बजे उठकर,खाना पकाती हूँ,

फिर घर पहुंचकर खाना पकाती हूँ,
तब जाकर खाना होता है l
और मैं सोच रहा हूँ,
वह तो मेरे घर में आकर भी,
लगातार आट घंटा रसोईघर में बिताती है l
क्या लिखूं मैं
इस लॉक डाउन में एक महीना आ नहीं पायी थी राखी,
उसके बाद अचानक,
एकदिन तीनघंटे साइकिल चलाकर मेरे घर आ गयी l
पागलों की तरह काम करती दिनभर,
न कोई थकान,चेहरे पर सिर्फ मुस्कान,
महीने में एकबार तीन दिन के लिए घर जाती है l
तीन घंटे तक साइकिल चलाकर,
क्या लिखूं मैं ?
एकतरफ घने अँधेरे में पेन और कॉपी ढूंढता फिरता हूँ,
कुछ लिखूंगा,इसलिए,
दूसरी तरफ , नौकरी खोये हुए करोड़ों भारतवासियों,के चेहरे और आँखों पर
छाया घना अँधेरा l
तीसरी तरफ,
घनघोर अँधेरे में ही
नींद से जग जाती है ,
कामवाली लड़की ,
बूढे माँ बाप और बेटे का भविष्य रोज़ अपने
कन्धों पर उठा लेती है l
असंभव और भारी भविष्य l
क्या लिखूँ मैं ?
अभी भी यहाँ तो घनी काली अँधेरी रात है l
चारों ओर अभी भी गहरी काली रात |

क्या लिखूं मैं ? (8)

रात दिन सोचता हूँ,
क्या लिखूं ?
कल परसो और इससे पहले भी सोचा,
क्या लिखूं ?
कविता को ही लेकर लिखूं और एक कविता ?
प्रेम की कविता ?
प्यार-जज्बात,रोमांटिक प्रेम को लेकर लिखूं दो चार पंक्ति
या प्रेम और प्रकृति को मिलाकर लिखूं कुछ,
क्या लिखूं मैं ?
या सुबह बांसद्रोणी के बाज़ार वाली उस सब्जी वाली मौसी को लेकर लिखूं ,
जो बाज़ार में कुमुद के फूल और साग लेकर बैठती है
प्रातः तीन बजे उठकर घर का काम निपटाकर,
बच्चों के लिए बासी भात और बताशा ढक कर रख,
पूरे घर को गोबर से लेप कर
फिर काम में आती है,
कुछ मील चलकर
कुमुद के फूल और साग ले लेती है वहां से,
उसके बाद बाज़ार जाते जाते दोपहर हो जाती है l
"कुमुद के एक गुच्छे फूल की एक रूपए कीमत है,बेटे लोगे ?"
"मौसी,३ गुच्छे २ में दोगी ?
रोजमर्रा की जिंदगी में कभी कभी,
बैठकर कहानी सुनता हूँ l
एक बजे बाजार के उठने पर कुल २० रूपए होते हैं ,
कभी कभी तीस-चालीस भी हो जाते हैं l
और जो साग बचते हैं वह घर ले जाती है l
" बेटे हम घर वापस जाकर रात को खाना पकाते हैं l
हम साग और चावल खाते हैं रात को गरमा -गरम l "
क्या लिखूं मैं ?
सोच रहा हूँ सुबह के उस बूढ़े की दीनता की कहानी को

हावड़ा में उसका घर है
पांच रूपए मांग रहा था
बस के लिए,घर लौटने के लिए,
राह चलने वाले बहुत लोग
बूढ़े का मज़ाक उड़ा रहे थे ,
रोज़ एक ही बहाने से पैसे मांगने के लिए।
मेरे पास बाजार के बाद एक भी रूपया तो बचा न था।
पर देख न सका उस असहाय की ओर ,
क्या लिखूं मैं ?
सुबह गबा भैया के चाय की दूकान में,
बाज़ार का थैला लेकर ज्यों ही खड़ा हुआ,
गबा भैया की जीती जागती स्मृति मन पर छा गयी।
उसदिन भी तो चाय का प्याला लिए
चाय बनाते हुए हँसते थे,बोलते थे।
इतना आर्थिक बोझ कैसे सहेंगे ?
सिर्फ पाँच साल की बच्ची के लिए जीना होगा
इसके बाद ही लटक पड़े।
उसके पहले कुछ दिनों तक भूखे रहने की बात मुझे नहीं बताई ,
वह ५ साल की बच्ची माँ का हाथ पकडे
आज चाय की दुकान में बैठती है।
क्या लिखूं मैं ?
प्रेम-जज़्बात,धुप-छाया का प्यार या बदलते समाज की कहानी
या इस अँधेरी गलियों में एक टुकड़े धूप की तलाश में ,
मेरी कविता को लेकर लिखूं और एक कविता
क्या लिखूं मैं ?
सोचता हूँ दिनभर।

क्या लिखूं मैं ?(9)

सुबह सुबह इस नीम के पेड़ से लगे होकर,
छत पर चुपचाप बैठे रहना, मुझे अच्छा लगता है,
सामने उन्मुक्त गगन,
महाशून्य में बदलते रंगों का अद्भुत खेल,
गौरैया चुप रहना नहीं जानती,,
लगातार पुकारती जा रही है,नीम की उन टहनियों पर बैठी,,
डिश ऐन्टेना के ऊपर बैठा हुआ कौआ,
डिश के कोनों पर होठ रगड़ता ही जा रहा है,
आँखों के सामने और न जाने कितना कुछ घटित होता जाता है,
सोच रहा हूँ उनको लेकर लिखूं ,
जीने की चाह में जिंदगी तूलिकाओं से चित्र बनाती है,
या लिखूं,
आज के मछलीवाले की कहानी?
सिर पर टोकरी लिए इस मुहल्ले से उस मोहल्ले तक घूमता फिर रहा है,
चिल्लाकर पुकार रहा है,"कतला मछली,पारषे मछली,भोला मछली लेंगे ?"
मैं छत के एक कोने में खड़े होकर,,
उससे टोकरी नीचे उतारने को कहता हूँ,
एक कतला,एक बड़ी सी भोला मछली और एक पारषे,
टोकरी की सारी मछलियां लेने पर,
230 रूपए प्रति किलो दाम तय हुआ,
एक वजन एक किलो,
एक पांचसौ ग्राम,
मछलियों को काटने की एक कटारी,कटारी को पकड़ी हुई लकड़ी,एक टोकरी,
सबकुछ एकतरफ तराजू पर चढ़ाकर,
मछलीवाले मछलियों को तौल रहा है l
बहुत संघर्ष करने के बाद,कुल मिलाकर सारी मछलियों
का वजन हुआ,पांच किलो नौसौ ग्राम,l
यानि तेरहसौ सत्यान्वे रूपए l
"बाबू ,प्रातः चार बजे निकला हूँ,लॉक डाउन में ट्रैन बंद हैं ,
पाँच बार ऑटो बदलकर गड़ियाहाट मोड़ पर आते आते ही,
200 रूपए खर्च हो जाते हैं,सुबह सात बज जाते हैं,
फिर मछलियां खरीदकर मुहल्लों में घूमता फिर रहा हूँ,
अभी दोपहर के बारह बज रहे हैंl "

क्या लिखूं मैं ?
लाभ कितना होता है,पूछने पर बोला,
"जाने-आने के खर्चे,टिफ़िन के खर्चे,को छोड़ भी दे,
तो 200 रूपए बच जाए ,यही काफी है l
घर लौटते लौटते शाम हो जाएगी l
फिर पता नहीं कब खाना खाऊंगा,
दो पियाज के साथ थोड़ी बासी भात,"
"बाबू,पूरा ही चौदहसौ कर दीजिए न,
वरना इतनी मेहनत के बाद आखिर बचता ही क्या है ?
इस कोरोना के दौरान चौदह घंटे मेहनत करके,केवल 200 रूपए के लाभ !
क्या लिखूं मैं?
मैं चौदहसौ रूपए दूंगा,सुनते ही मन ही मन कहने लगा,
"अल्लाह !आपका भला करे l "
और सड़क पर मछली काटने बैठ जाता है ,
अब तीन -चार बिल्लियों ने मछली पर हमला कर दिया l
मैंने उन्हें मछली के बचे कूचे हिस्सों को फेंककर देने को कहा l
और वे पागलों की तरह फेंके गए मछली के काटों को लेकर
लड़ने लगी,
सड़क के कुत्ते-बिल्ली,कौए ,
यहाँ तक कि काली चींटियां भी,लड़ने लगी l
वो मछलीवाला,
छः किलो मछली काटते हुए भी,अल्लाह के पास,
मेरे लिए दुआएँ माँग रहा है l
मेरे चश्मे के शीशे धुंधले होते जा रहे हैं,
क्या लिखूं मैं ?
जिंदगी अभी भी अपने ही ख्यालों में खोयी ,
चित्र बनाती जा रही है,
दूर कही बाजपक्षी शुन्य में समाया जा रहा है,
बादलों का राज्य फिर से खिल उठता है,
और भी लिखूं?
या लिखूं इस गरीब की दिनचर्या?
गरीब रिक्शेवाले,मछलीवाले,सब्जीवाले,
सड़क के कुत्ते-बिल्ली,कीड़े मकौड़े भूख से तड़प रहे हैं,
क्या लिखूं मैं सोचता हूँ ,
और आँखों से आँसू बहते जा रहे हैं l

क्या लिखूं मैं ?10

क्या लिखूं मैं ?
पचासों बसंत पार करके आया,
दिन के बाद रात,
और रात के बाद दिन,
ब्रेकफास्ट,लंच,,डिनर,
बदला नहीं कुछ भी,
विविधता से शुन्य जीवन में भी,
मन सौंदर्य को ढूंढ़ता है,
इसी बारे में और कुछ देर तक ,
लिखना चाहता हूँ ,
या लिखूं
मेरे मुहल्ले के कुछ कुत्ते-बिल्लियों की पीड़ा की कहानी,
लॉक डाउन शुरू होते ही उनके भोजन कम होने लगे,
जीर्ण-शीर्ण हो गया है देह,
मैं घर के बाहर सड़क पर उनको खाने देता था,
मेरे खाने के बाद पड़े रहने वाले चावल,मछली,
कुछदिन बाद मोहल्ले के एक दो लोगों ने ऑब्जेक्शन देना शुरू कर दिया,
“आप खाना देते हैं,
और वे यहाँ खाने आते हैं और यही पर टट्टी-पिसाब करते हैं,
बंद कीजिए ये सब,
देना ही है तो मैदान में जाकर दीजिए”,
क्या लिखूं मैं ?
पहले तो यकीन ही नहीं हुआ,
फिर देखा,
प्राय हर दिन,हर बार,वे खाने के बगल में ही,
या टट्टी या तो -पिसाब करते हैं l
मैंने खाना देना भी बंद कर दिया l
आज भी दोपहर को देखा,
कुत्ते बैठकर चीख रहे हैं,
मुझे देखते ही बिल्लियां पैरों के पास मंडराने लगती हैं,

उनके सारे बदन में भूख की साफ़ निशानियां झलकती है,
क्या लिखूं मैं ?
आजकल,कुछ रसगुल्ले खरीदकर,
थोड़ी दूरी पर जाकर चुपके-चुपके देकर आता हूँ,
वे चखते हैं, खाते हैं ,
और उनकी आँखों से आंसूं गिरते रहते हैं
क्या लिखूं मैं ?
दिन के बाद रातें,
रातों के बाद दिन,
इस सुन्दर जहां को महसूस करूँ,
असुंदर के बीच सुन्दर की तलाश करूँ,
या अनाहार,अर्द्धाहार से पीड़ित प्राणियों के मुँह को निहारूं ?
लिखूं ,क्या-क्या नहीं है नसीब में उनके,
क्या लिखूं मैं,?
सोचता हूँ और भी बहुतकुछ l

क्या लिखूं मैं (13)

क्या लिखूं मैं?
तब से सोच रहा हूँ,
बिस्तर पर आधे लेटे हुए,
आधी रात का समय है,
सिर पर आकाश पाताल,कल्पनाओं के पहाड़
मानो टूट पड़ रहे हैं ,
सोच रहा हूँ,
कॉलेज लाइफ,कैंटीन,गप्पे-शप्पों को लेकर,
दो चार लाइन लिखूं ,
या अपनी माँ की बात लिखूं ?
आजकल माँ एकदम ही नहीं हँसती,
बात भी कुछ खास नहीं करती,
लगभग सत्तर के आसपास उम्र है उनकी ,
दिन में कम से कम सत्रह दवाइयां लेती हैं ,
उसदिन सुबह-सुबह ड्राइंग रूम में माँ के साथ बैठा हुआ था,
"माँ,कैसी हो ?"
"सुन,तुझसे एक बात कहती हूँ,.....
जिंदगी में इतना कुछ होता है,
क्या भगवन ऐसा कुछ नहीं कर पाते,
जिससे कि जो जहाँ है वही पे रह जाए,
न कोई जन्म होता,न कोई मरण,
तब बहुत ही अच्छा होता न ?
मैं बहुत देर तक,
माँ की ओर देखता रहा,
क्या लिखूं मैं?
सोच रहा हूँ,
पड़ोस वाले घर के दिलीप भैया के माँ -बाप को लेकर लिखूं,
वे दोनो दूसरे मंज़िल में रहते थे,
मौसाजी प्रातः चार बजे उठकर ,

ठन्डे पानी से नहाते थे,
उनके नहाने के साथ-साथ साँसों की आवाज़ सुनाई पड़ती थी,
"क्या करूँ भाईसाहब!गीज़र नहीं है।
फिर छः बजते ही खाने का बंदोबस्त करता हूँ ,
"तुम्हारी मौसी कमज़ोर है,नहीं कर सकती !"
उनलोगों का गीज़र नहीं था,
क्या लिखूं मैं ?
मौसी मुझे देखते ही पुकारती थी,
डॉक्टर के पास ले जाने के लिए कहती थी,
छोटा बेटा बड़ा इंजीनियर था,
अचानक रोड एक्सीडेंट से मर गया।
"मुझे एक डॉक्टर के पास ले चलोगे ?
कोई तो नहीं लेकर जाता !"
ऑफिस जाते वक्त,
उनकी पुकार सुन न सका,
आज दोनों में से कोई भी नहीं है,
जीवन की तमाम व्यस्तताओं के कारण,
एक वृद्धा के साथ मैं नहीं खड़ा हो पाया,
क्या लिखूं मैं ?
सोचते सोचते रात प्रातः की ओर बढ़ती जाती है,
एक दो रात के पक्षियों की मधुर पुकार,
बिस्तर पर जिंदगी और मौत के बीच लटकता हुआ मैं ,
कॉलेज लाइफ,कैंटीन,बचपन,बूढे माँ -बाप,
हर्ष - विषाद आपस में घुलमिलकर
पेट में तकलीफ पैदा करते हैं,
क्या लिखूं मैं ,?
सारी रात यही सोचता रहता हूँ।

क्या लिखूं मैं ?(15)

क्या लिखूं मैं ?
आज संध्या उतर चुकी है l
बाहर टिपटिप बारिश,
मैं अटारी में अकेला खड़ा,
चाय और मुर्रा खा रहा हूँ,और सोच रहा हूँ क्या लिखूं ?
सोच रहा हूँ,गोपालद भाई के बेटे के बारे में लिखूं,
चौरस्ते पर पान का टूटा फूटा दुकान चलाता है,
सुबह से लगातार एक के बाद एक,
बीड़ी फूंकता है और खाँसता है,
कुछ दिन पहले पूछा,
इतनी खासी है तुम्हारी,ऊपर से इतनी बीड़ियाँ फूंकते हो,
मर जाओगे तो
कहा,
“बापू मरकर ऐसे ही मुझे जिन्दा मार गए l
कोई दुकान में नहीं आता,
घर जाऊँ तो बहु-बेटे पैसे के लिए चीखते हैं,
इस टेंशन से मर जाना ही बेहतर है,”
आज भी जाते जाते देखा,
धुंधली आँखों में धुंधले भविष्यत् को लिए,
राह में अकेला खड़ा रहता है l
अभी भी मुँह में जलती बीड़ी और खासी,
क्या लिखूं मैं ?
नारियल बागान के मोड़ पर,एक पब्लिक टॉयलेट के किनारे,
जो आदमी बैठा हुआ है,उसकी एक टांग नहीं है,
बगल में रस्सी से बँधा हुआ उसका स्क्रैच रखा हुआ है,
पब्लिक टॉयलेट से जब कोई निकलता है,तो दो रूपए देता है उसे,
बगल में खड़ा एक आदमी से कह रहा था, ,
“बारह घंटे ड्यूटी करता हूँ,रोज़,

कोई छुट्टी नहीं है,
दिन में दोसौ रूपए वेतन मिलते है।
नो वर्क,नो पे।
दो बेटियों को पढ़ा -लिखाकर उन्हें इंसान बनाने की कोशिश कर रहा हूँ।
अगर काम में न आऊं,तो उनको साथ लेकर अनाहार से मारा जाऊँगा।"
दोसौ रूपए से छः लोगों का परिवार चलता है,
बहुत कष्ट होता है,
क्या लिखूं मैं ?
प्रकृति को लेकर लिखूं,
बाहर टीन की छत पर टिपटिप बरसात,
मुर्रे के साथ चाय पीते हुए,निश्चिंत होकर जीवन गुज़ारता हूँ।
बाहर अनगिनत लोग,कैसे जियेंगे इसी चिंता से मर जाते हैं,
हार्ट फेल होकर मर जाते हैं,
सेरिब्रल से मर जाते हैं,उनको लेकर लिखूं,
क्या लिखूं,सोचता हूँ,चाय पीते पीते।

छिः

नेताजीनगर बसस्टैंड के पास,
वह आदमी सड़क पार कर रहा था,
हाथों के बल पर शरीर को घसीटते हुए,
सड़क पार कर रहा था वह आदमी,
काला कलूटा छेदों वाला शर्ट और हाफ पैंट पहना हुआ था,
गैंग्रीन ने पैरों को बिलकुल खाकर नष्ट कर दिया है।
लगभग दस साल तक लगता है जैसे,
बालों और दाढ़ियों को काटा नहीं है,
मेरे भैया साथ में थे,
देखकर बोले,"इतने कष्ट सहने से मर जाना ही बेहतर है।"
इस बात का समर्थन तो नहीं कर सकता,
पर यकीन मानिए,
किसी तरह भी,
उस आदमी की दुर्गति की तस्वीर प्रस्तुत करना,
मुमकिन नहीं है।
मैं चाहे जो भी लिखूं,
उस आदमी की पीड़ा के एक शतांश भी लिख नहीं सकता,
उस आदमी के शरीर से इतनी बू फ़ैल रही थी,
और सारा शरीर घावों से भरा हुआ था की,
उसके आसपास बीस फुट तक कोई आ नहीं सकता था।
सबकुछ मानकर भी एक सवाल बार बार उठता है,
वह आदमी क्या समाज से बाहर है ?
सबकी आँखों के समक्ष,
बिना किसी इलाज के,
वह असहाय आदमी दोनों हाथों के बल चल रहा था,
निर्लिप्त होकर सड़क पार कर रहा था,
मैं भी सुरक्षा के लिए थोड़ी दूरी बनाए,
बाकि सभी लोगों की तरह,
उस आदमी को देख रहा था,
शायद कविता लिखने के लिए कोई पात्र ढूंढ रहा था।
सिर्फ लिखकर ही क्या जिम्मेदारियां ख़त्म हो जाती है
सिर्फ समाज के ऊपर इल्जाम लगाना ही क्या पर्याप्त है
मैं क्या समाज से बाहर हूँ ?
मैं क्या कुछ भी नहीं कर सकता था उस आदमी के लिए
इसी को क्या कहते हैं सामाजिक दीनता
छिः

चाची का घर,

हमारे घर के विपरीत रहती थी,
ज्योत्सना की माँ,हमारी चाची,
थोड़ी सी जमीन पर
एक ही कमरे में किसी तरह ठूसठूसकर रहते थे,
छः बेटे,चाची और उनकी दो बेटियां,
चाचा तो कब के गुज़र गए हैं,
मैं तब बहुत छोटी थी।
यह गिनकर कह सकते हैं,
साल में कितने दिन उनके घर में भोजन पकता था,
और तो और भोजन सिर्फ
एक वक्त ही पकता था,
दूसरा वक्त वे खाली पेट रहते ही रहते थे।
चाची आठ बच्चों का किसी तरह से पालन पोषण
करने के लिए, रातदिन एक करती थी।
अभावों से भरे घर में,
आज कोयला नहीं है तो चूल्हा नहीं जल सकता।
कल कोयले खरीदने जाओ तो चावल के पैसे नहीं है,खाना नहीं पक सकता।
परसों कोयले हैं,चावल भी है ,
लेकिन सब्जियां नहीं बनी।
दो दिन भूखे रहने के बाद
उनके नसीब में थे,सिर्फ सफ़ेद चावल,नमक,मिर्च,प्याज।
पर फिर भी सबलोग वहीँ पेट भरकर खाते थे।
किसीदिन अगर बहुत बढ़िया मेनू रहा तो वह क्या था ?
दाल-चावल-उबले आलू
मैं जैसे जैसे बड़ी होती गयी
एक कर सब की शादी हो गयी
और धीरे धीरे आठ बेटे-बेटियों का घर बस गया।
सबलोग चाची को छोड़कर चले गए।
चाची का घर अभावों से भरा था,भोजन नहीं मिलता है,
अधिकतर दिन उपवास ही रहना पड़ता था।

पर फिर भी परिवार बेटे-बेटियों से भरा था।
आज चाची अकेली है।
कृशकाय शरीर है।
कुपोषण के कारण हड्डियां गिनी जा सकती है।
आठ बच्चों को कभी फुर्सत नहीं मिली,
एकबार भी नहीं मिली,
माँ को देखने आने की ,
अंतिम दिनों में चाची को उदारी हुआ था,
लम्बे दिनों तक बीमारी से भुगतने के बाद बांगुर अस्पताल में देहांत हो गया।
घर आज भी कंकाल बना खडा है।
लड़के कभी कभी आते हैं,
मँझला बेटा आकर टिन का छत खोलकर ले गया।
छोटा बेटा बाड़ों को लेकर चला गया,एकदिन
मैंने देखा,एकदिन बड़ा बेटा बांस की खूंटियों को लेकर खींचातानी कर रहा है।
वह पूरा घर आज कहाँ है ?
पूरे परिवार की तरह ही निर्वस्त्र खड़ा है आज चाची का कंकाल सम घर।

मन

जब यह मन,
एक ही दौड़ में खिड़की खोल ठंडी हवाओं के झोंकों के संग,
उड़ता फिरता है,
घुटनों तक जमे कीचड़ के दलदल में,
घुलमिल जाता है लड़कों के झुण्ड के संग,
और मछलियों को ढूंढ़ता फिरता है -
जब ये मन,
कमर में लाल-नील लंगोटी बाँधकर,
धान के खेतों में जाल बिछाकर,
गाल में हाथ डाले बैठकर,
छाती तक फैले पानी में उतारकर,
साड़ी साये को घुटनों के ऊपर उठाकर
कमर में बाँधकर
गांव की बाला बन
बांस से जलकुम्भी को साफ़ करता फिरता है -
जब यह मन,
धान के गोलों से चिपककर खड़े होकर
ट्रैन के डिब्बों को हैरानी भरी आँखों से देखता है,
और एक ही बार में भागता हुआ
मैदान,घाटियों,वन-जंगलों को पार करता और डोर से टूटती हुई पतंग के पीछे दौड़ता फिरता है-
जब यह मन,
भरी दोपहरी में काम के बीच में बरगत की छांव तले
एक कैन में बासीभात और पियाज मांगता है-
तब यह मन
ड्राइंग कॉपी में झोपडी, उसके दरवाजे और खिड़कियां बनाता है।
तब यह मन
एक ही बार में दौड़कर
खिड़की खोल
हवा के झोंकों के बगल में आकर
थम जाता है।
और जोर जोर से चलता फिरता है,
ड्राइंग कॉपी के हर पन्ने में।

पापा को मिला प्रतिदान

यातना क्या सिर्फ पापा को ही मिलनी थी ?
सुबह सुबह ही मेरी नींद खुल जाती है l
ब्रेड टोस्ट या फिर सैंडविच,
ब्रेकफास्ट के बाद फ्रेश होता हूँ,
बेटी के साथ खेलते हुए दिन की शुरुआत होती है l
यातना क्या सिर्फ मेरे पापा को ही मिलनी थी ?
ठीक सुबह दस बजे ए सी गाड़ी हाज़िर है l
मैँ वेल ड्रेस्ड होकर,
गले में टाई लटकाए,
बेटी को लेकर गाड़ी की तरफ आगे बढ़ता हूँ l
उसको स्कूल तक छोड़ना है,
फिर मुझे कॉलेज जाना है,
मेरी रूटीन बिल्कुल कॉर्पोरेट सी है l
अवहेलना क्या सिर्फ पापा के लिए ही है ?
घडी की सुइयों को मैं टक्कर देना चाहता हूँ l
दिनभर में कम से कम पच्चीस सलूट
और आगे पीछे सर सर कहनेवाले
कर्मचारियों की भागदौड़,
मैं एन्जॉय करता हूँ l
दोपहर के दो बज रहे हैं l
पिताजी कब आ गए ?
शायद ब्रेकफास्ट भी नहीं कर पाए,
उससे मुझे क्या ?
शायद उनका प्रेशर आज दो सौ/१०० है
उससे मुझे क्या?
शायद कॉलेज के कामों के चक्कर में पापा दवाई भी नहीं ले सके।
उससे मुझे क्या ?
मीटिंग के बीच में देखा ,
भूख से कातर होकर पापा ,
नमक और अदरक के टुकड़ों से पेट भर रहे हैं,

छोड़िए तो,मुझे क्या ?
पापा का सुबह वाला सिगरेट पैकेट अभी ख़त्म हो गया,
कह रहे थे,बहुत टेंशन में है,
बेटे के लिए,!
सिर्फ बेटे का कॉर्पोरेट स्टेटस को बरक़रार रखने के लिए,
कॉलेज के एक कोने में एक बूढ़ा दिनरात बिना एक भी लफ्ज बोले काम करता जाता है,
दूर! उससे मुझे क्या ?
लड़की को स्कूल में पहुँचाकर
मेरे दिन की शुरुआत होती है,
यही मेरी रोज़ की रूटीन है ,
मेरी तृप्ति,मेरी पसंद की रूटीन
आज तवीयत कुछ बिगड़ी हुई सी है l
सीने में दर्द है,हाथ-पैर में भयंकर यातना,
फिर भी सुबह बेटी को लेकर गाड़ी में बैठा,
बेटी गाड़ी में बैठते ही एकदम चुप सी जाती है l
बात ही नहीं करती मुझसे ,
मोबाइल में गेम्स खेल रही है l
गाड़ी गड़ियाहाट के तरफ बढ़ती जा रही है,
चुपके से बेटी से कहा,
“बेटी,आज सीने में बहुत दर्द हो रहा है,तवियत ठीक नहीं लग रही l”
मोबाइल से आँख न हटाते हुए बेटी बोली,
छोड़िए पापा,उससे मुझे क्या फर्क पड़ता है l "

वीरेश्वरानंद मेमोरियल होम, बारुईपुर

शरत मर गया,
स्टार आनंद,२४ घंटे में देखा,
शरद मर गया।
कुपोषण से वह लड़का बारुईपुर के होम में मर गया।
सत्रह साल के उस लड़के को,
कई दिन से भोजन नहीं मिला था,
जो लोग जिन्दा है,सब मर जाएंगे,
वे लोग विकलांग हैं,ठीक से बात नहीं कर पाते।
वे मांस,मछली,अंडे न खाए हैं,न देखे हैं।
सुबह एक कटोरी में मुर्रा,
दोपहर को चावल और पानी समान डाल,
रात को सिर्फ अनाहार,
रोज़ रात को अनाहार।
बहुतों के हाथ पैर टेढ़े हो गए हैं ,
कुछ के सारे शरीर में घाव हो गए हैं।
आँखों की पलकों में कीड़े जम गए हैं।
वे ठन्डे फर्श पर सोए रहते हैं,
कुत्ते-बिल्लियों के साथ।
टीवी में देखा,
भूख से बेहाल होकर,
वह लड़का कौए द्वारा ठुकराए हुए अमरुद खा रहा था ,
पेट में दर्द होता है,बहुत दिन भूखा था।
यह नहीं खाऊँगा तो मार जाऊँगा।
खाना मांगने पर सुपर थप्पड़ मारता है ,लाठी से पीटता है,
बिना खाना खाए बहुतों की हड्डियां गिनी जा सकती हैं।
चालीस लड़कों के लिए प्रतिदिन केवल चौबीस रूपए तय है।
फिर भी वे जिन्दा है।
आजतक बिना खाकर भी वे जिन्दा हैं।
लेकिन किसी दिन जरूर मारे जाएंगे,
किसी भी दिन।
कितने कितने शरत,
कितने कितने हेमंत ,
कितने कितने बसंत,
कठोर शीत में इसी तरह जन्म लेते और मर जाते हैं।
अनाहार से मर जाते हैं।
ठण्ड में काँपकर मर जाते हैं,
इस गहरे जनअरण्य में,
कौन किसकी खबर रखता है ?
इस गहरे जनअरण्य में
किसको किसकी खबर मिलती है?
हाय।